राम-श्याम : युगल शतक

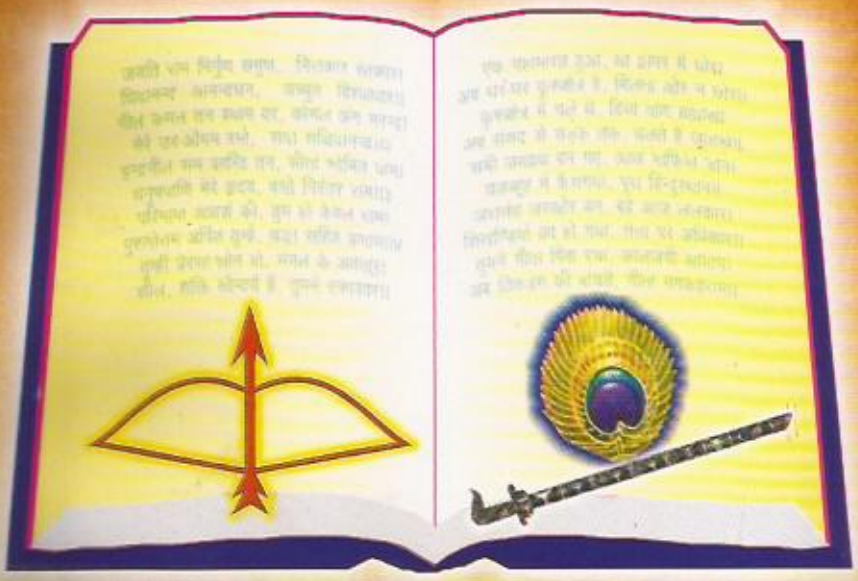

डॉ. अरुण प्रकाश अवस्थी

राम-श्याम : युगल शतक

तथा

अन्य कविताएँ

डॉ० अरुण प्रकाश अवस्थी

श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय

कोलकाता

प्रकाशक :
श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय
१सी, मदनमोहन बर्मन स्ट्रीट
कोलकाता-७०० ००७
टेलीफैक्स : २३८ ८२१५
ई-मेल : kumarsabha@vsnl.net

■

जन्माष्टमी, सम्वत् २०५९
३१ अगस्त २००२ ई.
११०० प्रतियाँ

■

मूल्य : **५० रुपये**

■

आवरण सज्जा :
श्रीजीव अधिकारी

■

मुद्रक :
एस्केज
८, शोभाराम वैशाख स्ट्रीट
कोलकाता-७०० ००७
दूरभाष : २१८ ८०६४

Ram-Śhyam : Yugal Shatak
(Compilation of Hindi Poems)
by : **Dr. ARUN PRAKASH AWASTHI**
Price : Rs. 50/-

समर्पण

हिन्दी पत्रकारिता के आलोक शिखर

दैनिक विश्वमित्र के यशस्वी संपादक

स्व० कृष्ण चन्द्र अग्रवाल

की

पावन स्मृति

को

सादर समर्पित

–अरुण प्रकाश अवस्थी

राम - श्याम : युगल शतक

यशस्वी कवि अरुण प्रकाश अवस्थी की नई काव्य-कृति "राम-श्याम : युगल शतक" आधुनिक युग के आस्थावान-विक्षुब्ध हृदय से निकली प्रभावशाली रचना है। राम और श्याम दोनों को कवि निर्गुण परब्रह्म का साकार विग्रह मानता है, जो मानव कल्याण के लिए रूप धारण करते हैं।

कवि की मान्यता के अनुसार निर्गुण ब्रह्म ने ही लोक-कल्याण के लिए अपने को राम और श्याम के रूप में अभिव्यक्त किया है। उसकी यह मान्यता श्रीमद्भागवत के अनुरूप ही है। भागवत् में कहा गया है :-

नृणां निःश्रेयसार्थाय व्यक्तिर्भगवतो नृप।
अव्ययस्याप्रमेयस्य निर्गुणस्य गुणात्मनः ।। १०/२९/१४ ।।

अर्थात् अव्यय और अप्रमेय निर्गुण तत्त्व की सगुण रूप में अभिव्यक्ति मनुष्यों के परम कल्याण के लिए ही होती है। कवि ने यदि श्रीराम की वंदना करते हुए लिखा है :-

जयति राम निर्गुण सगुण निराकार साकार।
चिदानंद आनंद घन अच्युत विश्वाधार।।

तो श्रीकृष्ण का निरूपण करते हुए वह कहता है :-

चिदानन्द आनन्द घन जगत नियंत्रक ईश।
मन वाणी से परे हो दामोदर योगीश।।

अज अद्वैत अनाम तुम गुणातीत भगवंत।
नेति-नेति कहते सदा वेद यती मुनि संत।।

किन्तु कवि के लिए राम और श्याम केवल ज्ञान के नहीं बल्कि मूलतः भक्ति के ही आलंबन हैं। इसीलिए वह इन दोनों को अपने नेत्रों में बसाना, मन-मंदिर में रमाना चाहता है। श्रीराम का वर्णन करते हुए कवि के मन में उनका शान्त, संयत, मर्यादा पुरुषोत्तम रूप उभरता है :-

शान्त रूप पट पीत उर सीस मुकुट धनु हाथ।
अरुण नयन प्रतिपल बसो सीय सहित रघुनाथ।।

परिभाषा आदर्श की तुम हो केवल राम।
पुरुषोत्तम अर्पित तुम्हें, श्रद्धा सहित प्रणाम।।

इसी तरह से श्रीकृष्ण का चित्रण करते समय कवि उनके लीला-पुरुषोत्तम रूप पर बल देता है :–

माधव मदन मुरारि जय, मोहन माखनचोर।
मुख-शशि शोभा हित बने, मेरे नयन चकोर।।

जयति रासलीला निपुण, बंशीधर छविधाम।
कुँवर कन्हैयानन्द के, मीरा के घनश्याम।।

एक ही तत्त्व की दो अभिव्यक्तियाँ स्वरूपतः एक होते हुए भी भक्तों की अलग-अलग रुचि को तृप्त करने के लिए अपने में कुछ भिन्नता भी वहन करें, यह स्वाभाविक ही है। मुझे एक दोहा याद आ रहा है, जिसमें राम और श्याम की एकता और भिन्नता को बहुत अच्छी तरह संकेतित किया गया है :–

राम श्याम दोउ एक हैं, रूप रंग तिल रेख।
इनके नयन गँभीर हैं, उनके चपल विशेष।।

नयनों के गांभीर्य से श्रीराम के मर्यादा पुरुषोत्तम रूप को और नेत्रों के चापल्य से श्रीकृष्ण के लीला पुरुषोत्तम रूप को उजागर करने वाला यह दोहा अत्यंत मार्मिक है। श्रीराम और श्रीकृष्ण के चरित्र की विशेषताओं को रेखांकित करने के बाद कवि आधुनिक भारतवर्ष की दुर्दशा को उभारकर राम और श्याम से प्रार्थना करता है कि पुनः अवतार ग्रहण कर वे अपने प्रिय भारतवर्ष का पुनरुद्धार करें।

वर्तमान भारत की विकृतियों की पीड़ादायक छवियों को दोनों शतकों में बार-बार अंकित किया गया है। यदि राम के नाम शतक में लिखा है –

तपबल, अपबल, ज्ञानबल सभी हुए कमजोर।
घोर सिफारिश का यहाँ पग-पग पर है जोर।।

●

सम्मानित है मंथरा, हुए जयंत महान।
चरागाह ही बन गया, पूरा हिन्दुस्तान।।

●

शबरी आज उपेक्षिता, सूखे उसके बेर।
सारे गिरिजन विपिनजन रहे तुम्हें ही टेर।।

चंदा बेचे चांदनी, अमा बनी बरियार।
सूरज भी अब कर रहा, किरणों का व्यापार।।

तो श्रीकृष्ण को गुहारते हुए उसने उनके प्यारे देश की वर्तमान भयावह स्थिति को इस प्रकार चित्रित किया है –

नाग नाथ कर किया था, तुमने उसे अधीन।
किन्तु बजाते आज हम, समझौते की बीन।।

●

एक महाभारत हुआ था द्वापर में घोर।
अब घर-घर कुरुक्षेत्र है, मिलता ओर न छोर।।

●

सभी जयद्रथ बन गए आज माफिया डॉन।
चक्रव्यूह में फँस गया पूरा हिन्दुस्तान।।

●

पहले शकुनी एक था जुआबाज सरताज।
पर मामा अब हर गली हुए लाटरी बाज।।

●

पशुचारा में कर रहे गोलमाल गोपाल।
लल्लू-पंजू तक यहाँ करते खूब कमाल।।

राम और श्याम दोनों से कवि ने प्रार्थना की है कि वे पुनः अवतार लेकर भारत को फिर से महिमा मंडित करें। मैं यह कह सकता हूँ कि इन दोनों शतकों में कवि के साथ-साथ सभी आस्थावान भारतीयों का पीड़ित हृदय भी स्पंदित हो रहा है। कवि ने आधुनिक विचारकों के प्रति भी क्षोभ प्रकट करते हुए लिखा है कि वे आज लोक मंगल के लिए समर्पित न होकर केवल वाग्विलास ही कर रहे हैं। बड़ा सटीक है यह दोहा–

लोक चेतना हित न अब कलम उठाते व्यास।
करते कॉफी हाउस में केवल वाग्विलास।।

मैं इस पुस्तक के लिए कवि को बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि उसकी कलम और अधिक रचनात्मक रूप से व्यास के धर्म के निर्वाह के लिए समर्पित होगी।

राजभवन
लखनऊ-२२७ १३२

(विष्णुकान्त शास्त्री)
राज्यपाल, उत्तरप्रदेश

मन की बात

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम एवं लीला नायक श्रीकृष्ण मेरे आराध्य इसलिए रहे हैं कि ये युगल युगावतार अकुण्ठ भाव से मानव मात्र के लिए समर्पित ही नहीं रहे हैं अपितु समाज के दलित कहे जाने वाले वर्ग को उन्होंने अपने से भी अधिक सम्मान दिया। राम का गीध, जटायु, शबरी, निषाद एवं हनुमान के प्रति उच्चभाव एवं कृष्ण का विदुर, सुदामा आदि के प्रति सम्मान भाव उन्हें स्वतः ही दिव्य एवं लोकोत्तर पद पर प्रतिष्ठित कर देता है। उन्होंने आज के राजनेताओं की भाँति दलितोद्धार के नाम पर वोट बटोरने के लिए न तो कृत्रिम अभिनय किया था और न घड़ियाली आंसू ही बहाए थे। इसके विपरीत आज के अधिकांश राजनेता आचरण तो अत्यंत निम्न करते हैं पर स्वयं को राम एवं कृष्ण से भी अधिक पतितपावन और दलितोद्धारक के रूप में प्रदर्शित करते हैं। यही आज का सबसे बड़ा व्यंग्य है।

जीवन जब सहजता, सरलता एवं सत्य से दूर हो जाता है तब वह अपने ही द्वारा सृजित विरूपताओं के महाजाल में फँस जाता है। विरूपताएं हमें अपने मायावी स्वरूप—कदाचार, दुराचार, अनाचार एवं भ्रष्टाचार के पंक में आकण्ठ डुबा देती हैं। कौन असली है, कौन नकली है यह पहचान मिट जाती है। आज के स्वयम्भू स्वेच्छाचारी नेताओं परम बलशाली सरकारी आदमियों एवं रक्षण के नाम पर भक्षण करने वाले पुलिसजनों के चेहरों पर कई-कई मुखौटे लगे हैं। आज का नेता सार्वभौमिक परमेश्वर क्यों बन गया है ? इसका एक ही कारण है। हम शौचालय से लेकर पवित्र गायत्री मंदिर के उद्घाटन आदि में इन्हीं भ्रष्ट नेताओं को पुरोहित बनाते हैं। काले अक्षर को भैंस समझने वाले संस्कृत महाविद्यालयों के अध्यक्ष की शोभा बढ़ाते हैं। तभी तो आज के ये तथाकथित जनप्रतिनिधि लाखों में बिक रहे हैं —

इसे कहें सौभाग्य या इसे कहें संजोग।
लाखों में अब बिक रहे, दो कौड़ी के लोग।।

हमारी ही अपराध प्रवृत्ति पुलिस के भ्रष्टाचार को बढ़ावा देती है। आज के युग में दोनों को आनन्द ही आनन्द है। भले आदमी की कहीं पूछ नहीं है, चाहे नेताजी का दरबार हो या कोतवाल जी का। तभी तो न चाहते हुए भी कहना पड़ा—

आरक्षी दल संगठित पंजीकृत बटमार।
कोतवालजी के हुए चोर उचक्के यार।।

बलशाली सरकारी आदमी के विषय में इतना ही कहना पर्याप्त है 'हर सरकारी आदमी, है बदजात तुरंग।' इस स्वतंत्र भारत में तो सारी परिभाषाएं ही बदल गई हैं। घूस

'सुविधाशुल्क' हो गया। नेताओं ने रंग बदलने में गिरगिट को भी मात कर दिया। आयाराम-गयाराम, तुष्टीकरण, बहुसंख्यकों का पग-पग पर अपमान, नकली भगवान आदि समस्याओं का प्रणेता कौन है, यह हम सब जानते हैं। यहां तक कि राम के देश में राम का नाम लेना भी अपराध हो गया है। यह देश केवल राम-भरोसे ही चल रहा है। तभी तो युगल शतक का प्रथम खण्ड "एक शतक राम के नाम" राम को समर्पित है।

द्वितीय खण्ड 'एक शतक श्याम के नाम" कृष्ण को समर्पित है। सब कुछ वही है जो कृष्ण के युग में था पर थोड़ा फेर-बदल हो गया है। दिल्ली आज कालिय दह बन गई है। रास लीला का स्थान डिस्को डान्स ने ले लिया है। द्वापर की पूतना कालगर्ल (मौत की पुतली) बन गई है। संदीपन गुरु ट्यूशनबाज बन गए हैं और शिष्य गुरु द्रोणाचार्य का ही अंगूठा काट लेने की फिराक में रहते हैं।

आज का पूरा माहौल ही एक जीवन्त व्यंग्य बन गया है। इसीलिए हर शतक के प्रारम्भ में मैंने युगल युगावतारों के विराट व्यक्तित्व को व्यंजित करने का बाल सुलभ यत्न किया है और अंत में उन्हीं से इन विरूपताओं के शमन हेतु प्रार्थना भी की है।

इसी सन्दर्भ में मैं साहित्य के आलोकशिखर एवं उत्तरप्रदेश के महामहिम राज्यपाल आचार्य विष्णुकान्त शास्त्री के श्री चरणों में अपनी अमित श्रद्धा अर्पित करता हूँ। उन्होंने जिस सहजता एवं उदारता से भूमिका लिखी, उसके लिए मैं मात्र उनके प्रति आभार प्रदर्शित करके उनके ऋण-भार से मुक्त नहीं होना चाहता। उनका पितृवत् स्नेह एवं गुरुवत् आशीर्वाद तो मुझे सहज सुलभ है।

इस पुस्तक का प्रकाशन कलकत्ता के कीर्तिलब्ध साहित्य-तीर्थ श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय ने किया है। उसके कर्णधार अपने ज्येष्ठ भ्राता तुल्य सुधी विचारक श्री जुगल किशोर जैथलिया को, जिनका प्रेम एवं प्रोत्साहन मुझे सहज ही प्राप्त है, धन्यवाद देकर मैं कर्तव्य-मुक्त नहीं होना चाहता।

मैं विशेष कृतज्ञ हूँ पुस्तकालय के अध्यक्ष श्री कृष्ण स्वरूप दीक्षित, मंत्री श्री महावीर बजाज तथा साहित्य मंत्री डॉ० उषा द्विवेदी का, जिनकी सक्रियता से पुस्तक को सुन्दर स्वरूप प्राप्त हुआ है। हाँ! डॉ० प्रेमशंकर त्रिपाठी ने यदि इस पुस्तक के प्रकाशन में इतनी तत्परता न दिखाई होती तो इसे प्रकाश में लाना सम्भव न होता।

अंत में अपने परम स्नेही बड़े भ्राता कवि डॉ० चन्द्रदेव सिंह, श्री दुर्गादत्त सिंह एवं प्रसिद्ध एडवोकेट श्री वीरभद्र सिंह आदि का भी आभारी हूँ, जिनसे मुझे निरंतर प्रोत्साहन मिलता रहता है।

अरुण प्रकाश अवस्थी

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी
संवत् २०५९

(डॉ० अरुण प्रकाश अवस्थी)

प्रकाशकीय

डॉ० अरुण प्रकाश अवस्थी के सर्जनशील कर्तृत्व ने कोलकाता ही नहीं सारे देश में अपनी पहचान बनाई है। इसका प्रमुख कारण पत्र-पत्रिकाओं तथा समाचार पत्रों में उनका अनवरत छपते रहना है। वैसे तो साहित्य की विविध विधाओं पर उन्होंने साधिकार लिखकर प्रसिद्धि प्राप्त की है परन्तु कविता के क्षेत्र में उन्हें विशेष कीर्ति मिली है।

अरुणजी ने छंदबद्ध और छन्दमुक्त दोनों प्रकार की कविताओं की रचना की है, परन्तु छन्दबद्ध रचनाओं में उन्हें महारत हासिल है। इसी प्रकार उन्होंने आधुनिक विसंगतियों पर प्रभावी तेवर वाली कविताओं से लेकर विविध संदर्भों की ढेरों रचनाओं का सृजन किया है लेकिन उनकी मूल पहचान ओजस्वी राष्ट्रवादी रचनाकार की है। 'रावी-तट', 'महाराणा का पत्र', 'क्रान्ति का देवता' जैसी वीररस प्रधान कृतियों ने उन्हें राष्ट्रीय चेतना सम्पन्न कवियों की पंक्ति में ससम्मान प्रतिष्ठित किया है।

भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता के प्रति गौरव-बोध तथा भारत की माटी के प्रति अनन्य अनुराग अवस्थीजी की रचनाओं में बार-बार मुखरित हुआ है। स्वाभिमान, देश-भक्ति तथा राष्ट्रीयता उनकी कविताओं का प्रमुख स्वर है। 'महाराणा का पत्र' में कवि का राष्ट्र के प्रति प्रेम इन पंक्तियों में ध्वनित हुआ है :

यह देश नहीं देवालय है, इसका गौरव चिर अक्षय है।
टूटती नहीं इसकी लय है, सचमुच भारत चिर अव्यय है।।
इसके प्राणों में तपबल है, भुज में आयुध का संबल है।
यह पीता सदा हलाहल है, इसका कण-कण तुलसीदल है।।

देश पर विसंगतियों की काली निशा का प्रकोप देखकर कवि क्षुब्ध है। वह स्वर्णिम विहान वाले सर्वसमर्थ भारत देश के निर्माण हेतु देशवासियों से आह्वान करता है :

बंद कर दो तुम निशाओं के लिए हर द्वार,
हर सुनहली भोर कंचन से करे अभिसार।
गूँज जाये अमर वन्देमातरम् का गीत—
आज मिलकर देश का कर दो नया श्रृंगार।।

अवस्थीजी ने अनेक व्यंग्य प्रधान कविताओं की रचना भी की है। ये रचनाएँ तात्कालिक विनोद से परे मार्मिकता के कारण स्थायी प्रभाव छोड़ती है। हास्य व्यंग्य की लघु रचनाओं ने अवस्थीजी को कुशल व्यंग्यकार की प्रतिष्ठा प्रदान की है।

अरुणजी की रचनाओं की सबसे बड़ी विशेषता संप्रेषणीयता है। कविता पढ़ने के उनके ख़ास अंदाज़ के कारण उनकी कविताएँ श्रोताओं पर पर्याप्त प्रभाव छोड़ती हैं। ओजस्वी कंठ से निकली वीर-रस प्रधान रचना हो या तिर्यक तेवर के साथ अभिव्यक्त सामयिक व्यंग्य— दोनों की अनुगूँज पाठकों के दिलो-दिमाग पर देर तक बनी रहती है।

श्री अरुण प्रकाश अवस्थी ने मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम और लीलानायक श्रीकृष्ण पर केन्द्रित दोहों की रचना की है जिसमें इन अवतारों की वंदना के साथ-साथ आधुनिक जीवन की विसंगतियों पर टिप्पणी भी है। 'राम-श्याम : युगल शतक' शीर्षक इस कृति पर श्रद्धेय आचार्य विष्णुकान्त शास्त्री ने भूमिका में सम्यक् प्रकाश डाला है। इस पुस्तक के अन्त में अवस्थीजी की कतिपय अन्य कविताओं को जोड़कर हमने यह प्रयास किया है कि कवि की विविध आस्वाद वाली कविताओं का एकत्र संकलन पाठकों को प्राप्त हो सके।

हमें विश्वास है कि श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय के इस प्रकाशन का काव्य-प्रेमी बन्धु भरपूर स्वागत करेंगे।

(जुगलकिशोर जैथलिया)

अनुक्रम

	गीत	पृष्ठ
१.	एक शतक राम के नाम	१३ - ३१
२.	एक शतक श्याम के नाम	३३ - ५१
३.	कुछ लोकप्रिय रचनाएँ	५३ - ७२

एक शतक राम के नाम

कामना

शान्त रूप पट पीत उर, शीश मुकुट धनु हाथ।
'अरुण' नयन प्रतिपल बसो, सीय सहित रघुनाथ।।

जयति राम निर्गुण सगुण, निराकार साकार।
चिदानन्द आनन्दघन, अच्युत विश्वाधार।।१।।

नील कमल तन श्याम वर, कोमल अंग मरन्द।
मेरे उर-आँगन रमो, सदा सच्चिदानन्द।।२।।

इन्द्रनील सम कान्ति तन, सीता शोभित वाम।
धनुषपाणि मेरे हृदय, बसो निरंतर राम।।३।।

परिभाषा आदर्श की, तुम हो केवल राम।
पुरुषोत्तम अर्पित तुम्हें, श्रद्धा सहित प्रणाम।।४।।

तुम्हीं प्रेरणा-स्रोत हो, मंगल के अवतार।
शील, शक्ति सौन्दर्य हैं, तुममें एकाकार।।५।।

तुम्हें कहें युग-पुरुष या, नर का चरमोत्कर्ष।
राम तुम्हीं में रम रहा, पूरा भारतवर्ष।।६।।

धर्म-सेतु उपमा रहित, परम तीर्थ द्युतिमान।
वेद-वेद्य विज्ञानमय, राम रूप भगवान।।७।।

नील जलद सम सुभग तन, लोचन कमल विशाल।
रमो निरंतर उर सदन, कौशल्या के लाल।।८।।

सीता प्रिय नव जलद तन, शोभा पुंज ललाम।
करुणा-सागर, उर बसो, नित्य रमापति राम।।९।।

नेति-नेति कहते निगम, विश्व वंद्य गुणधाम।
लोक-प्रकाशक भुवन-मणि, तुमको भुवन प्रणाम।।१०।।

शुद्ध परात्पर ब्रह्म तुम, शुभ ॐकार स्वरूप।
विश्वात्मा अविकार नित, धर्म रूप सुर-भूप।।११।।

मनहित सदा मनोरम, नयनों हित रमणीय।
सदा राम अभिराम तुम, हर प्रकार कमनीय।।१२।।

कम्बु ग्रीव, आजानुभुज, वाग्मी नर-शार्दूल।
कोटि-कोटि रवि से प्रखर, रहो सदा अनुकूल।।१३।।

जगत प्रकाशक मोहगत, मुक्त सर्व आधार।
अवध विहारी तुम्हीं हो, ज्ञान भक्ति के सार।।१४।।

स्रष्टा-द्रष्टा तुम्हीं हो, तुम्हीं रूप तुम दृष्टि।
नाच तुम्हारे ही रही, इंगित पर यह सृष्टि।।१५।।

जो कुछ है इस सृष्टि में, वह केवल तुम नाथ।
सबसे होकर भी परे, रहते सबके साथ।।१६।।

पवन तुम्हारी साँस है, अँगड़ाई भूचाल।
नयन तुम्हारे सूर्य-शशि, भ्रू है काल कराल।।१७।।

शुद्ध सनातन, शान्त, शुभ, सतत सच्चिदानंद।
चिन्मय, चेतन, चाप धृत, सर्वरूप स्वच्छंद।।१८।।

अथ-इति लोकों की तुम्हीं, शब्द तुम्हीं तुम अर्थ।
अपरम्पार असीम अज, अव्यय परम समर्थ।।१९।।

परम तत्त्व विज्ञान-धन, विश्वरूप श्रीराम।
गुणातीत नित निग्रही, इन्द्रियजित गत काम।।२०।।

द्वैत रहित अद्वैत तुम, सबके परम प्रकाश।
क्षिति, जल, पावक, अनिल तुम, तुम्हीं अनन्ताकाश।।२१।।

अमृत रूप अक्षर तुम्हीं, ज्ञान-गिरा गोतीत।
निर्विकल्प निरुपाधि तुम, तुम्हीं साम संगीत।।२२।।

विभु वरेण्य व्यापक विमल, सिद्धि-साधना धाम।
तुम्हीं आदि अवसान तुम, सृष्टि-मूल श्रीराम।।२३।।

बीज रूप व्यापक विभव, मायाधीश अनन्त।
नहीं जान पाए तुम्हें, वेद-यती-मुनि संत।।२४।।

पद-पंकज में जो रमें, मधुप भक्ति-रस लीन।
ऐसे निर्मल जनों के, तुम हो सदा अधीन।।२५।।

सरल तुम्हारी रीति है, सरल तुम्हारी नीति।
सहज सरलता में सदा, मिली तुम्हारी प्रीति।।२६।।

सर्व व्याधि हित भेषज, राम तुम्हारा नाम।
बनी रहे पद-कमल में, सदा भक्ति निष्काम।।२७।।

इन्द्रियादि के अश्व ये, मानें नहीं लगाम।
इन्हें नियंत्रण में करो, बन कर सारथि राम।।२८।।

यह शरीर-रथ अटपटा, मन चंचल अति व्यग्र।
अहं और संदेह के, लगे युगल हैं चक्र।।२९।।

देख न पाते नयन कुछ, है भ्रम का अधिकार।
षट्-विकार अवरोध बन, नाथ रहे ललकार।।३०।।

मानदण्ड हो मनुज के, हे हीरक आदर्श।
परिभाषित तुम से हुआ, युग में भारतवर्ष।।३१।।

तुम अव्यक्त अनाम हो, अज अद्वैत अनूप।
मेरे मन-मंदिर रमो, प्रतिपल कोशल भूप।।३२।।

तुम्हीं अर्चना वंदना, ज्ञान तपस्या यज्ञ।
सिद्धि साधना कल्पना, श्रेय प्रेय अनवद्य।।३३।

कातर स्वर से तुम्हें फिर, बुला रहा साकेत।
रस सूखा इस धरा का, खेत-खेत है रेत।।३४।।

अब न यहाँ त्रेता रहा, है कराल कलिकाल।
शब्द-अर्थ बदले सभी, उल्टी है हर चाल।।३५।।

भ्रष्टतंत्र का बन गया, प्रजातंत्र पर्याय।
मारीचों से फिर हुई, आर्य धरा निरुपाय।।३६।।

अब न स्वस्तिवाचन कहीं, असुर बजाते गाल।
आज तुम्हारी धरा पर, नाच रहे बैताल।।३७।।

गली-गली में क्रौंच-वध, धनु-शर ताने व्याध।
आज तुम्हारा नाम भी, लेना है अपराध।।३८।।

तमसा के तट हैं मलिन, मलिन जाह्नवी-नीर।
कहाँ आदि कवि जो लिखे, क्रौंची-उर की पीर।।३९।।

नेता के हैं अर्थ अब, पाखण्डी बटमार।
चोर उचक्के हैं बने, घर के पहरेदार।।४०।।

सुविधाओं पर जो बिके, जन्मजात गुमराह।
आज जमाने को वही, दिखलाते हैं राह।।४१।।

गूंगे राग सिखा रहे, पंगु सिखाते चाल।
अंधे भी बतला रहे, आँखों देखा हाल।।४२।।

तप-बल, अप-बल, ज्ञान-बल, सभी हुए कमजोर।
घूस सिफारिश का यहाँ, पग-पग पर है जोर।।४३।।

राजहंस सब उड़ गए, बगुलों का सम्मान।
कोकिल स्वर बंदी बने, पथराया दिनमान।।४४।।

मातृभूमि के सूक्त अब, विस्मृत हैं नरनाह।
आज देश की बात भी, करना हुआ गुनाह।।४५।।

राष्ट्र अस्मिता हो रही, सरेआम नीलाम।
भारत में ही हो गया, भारत ही गुमनाम।।४६।।

पंचवटी इस देश की, बैठी आज उदास।
अनगिन माया मृगों का, बनी हुई आवास।।४७।।

सम्मानित है मन्थरा, हुए जयन्त महान।
चरागाह ही बन गया, पूरा हिन्दुस्तान।।४८।।

शबरी आज उपेक्षिता, सूखे उसके बेर।
सारे गिरिजन विपिन जन, रहे तुम्हें ही टेर।।४९।।

छलनाओं की झूमती, शूर्पणखाएँ आज।
सीताएं भयभीत हैं, कैसा है यह राज।।५०।।

संस्कृति की गौतम प्रिया, बनी हुई पाषाण।
अपलक राह निहारती, दो इन्द्रों से त्राण।।५१।।

कालनेमियों ने किया, ऐसा कुछ षडयंत्र।
मानों उनके स्वार्थ हित, भारत हुआ स्वतंत्र।।५२।।

मारीचों ने रख लिया, फिर मायावी वेश।
त्रस्त स्वामियों से हुआ, राम तुम्हारा देश।।५३।।

कालनेमि की कृपा से, गर्त हो गया राष्ट्र।
कभी यहाँ पर एक था, अब अनेक धृतराष्ट्र।।५४।।

उतना ही है वह सफल, जो जितना फनकार।
सत्ताखोरों के बने, अब तस्कर गलहार।।५५।।

धनुष-भंग की जगह अब, देश हो रहा भंग।
प्रतिपल होती जा रहीं, राष्ट्र सरहदें तंग।।५६।।

मक्कारों को आज है, बस दिल्ली से प्यार।
इन घटकर्णों ने किया, पूरा बंटाढार।।५७।।

सरस्वती निर्वासिता, यक्षों का है मान।
किस बल पर अब हम कहें, यह है हिन्दुस्थान।।५८।।

सिंह न जाने क्यों यहाँ, गए भूल निज धर्म।
श्वान, श्रृगाल सिखा रहे, अब जीवन का मर्म।।५९।।

कभी रहे अनुकूल जो, आज बने प्रतिकूल।
अब नाविक ही नोचते, किश्ती का मस्तूल।।६०।।

उड़ा रही हैं आँधियाँ, आज भयंकर धूल।
चित्रकूट तक में प्रभो, उग आए हैं शूल।।६१।।

आज तुम्हारी भक्ति पर, लगा पूर्ण प्रतिबंध।
भक्तों को ललकारते, शीश-विहीन कबन्ध।।६२।।

अपने ही घर में बने, हम शरणार्थी आज।
कलुषित पूरा हो गया, दुग्धोज्ज्वल नगराज।।६३।।

केशर की धरती विकल, उगल रहे विष नाग।
मलय समीरण मर गया, लगी द्रोह की आग।।६४।।

महिमा-मण्डित हो रहे, राष्ट्र-शत्रु गद्दार।
सब सुख-सुविधा दे रही, अपनी ही सरकार।।६५।।

दूध पिलाया जा रहा, खल नागों को आज।
सत्ता लोभी कर रहे, कलुषित माँ का ताज।।६६।।

ये संवेदनहीन सब, क्या समझेंगे पीर।
बहा रक्त-आँसू रहा, जम्मू सँग कश्मीर।।६७।।

इक-इक चेहरे पर लगे, कई मुखौटे आज।
असली-नकली का नहीं, मिल पाता अंदाज।।६८।।

चंदा बेचे चाँदनी, अमा बनी बरियार।
सूरज भी अब कर रहा, किरणों का व्यापार।।६९।।

मंत्री से संत्री तलक, सब हैं पाकेटमार।
जनता रूपी गाय को, चूस रहे मक्कार।।७०।।

हँसने से रोने तलक, विषम करों की मार।
तिकड़मबाजी का यहाँ, गर्म हुआ बाजार।।७१।।

जाल कुशासन का बिछा, बैठे छली प्रचण्ड।
तानोगे कब तक नहीं, इन पर निज कोदण्ड।।७२।।

आरक्षण के कोप का, ऐसा हुआ प्रकोप।
चन्दन वन होने लगे धीरे-धीरे लोप।।७३।।

गुरु वशिष्ठ अब मौन हैं, मायावी वाचाल।
कितने ही गुरुदेव अब, हैं जी के जंजाल।।७४।।

प्रगतिशील हैं आज वे, जिनमें प्रगति न शील।
लेनिनादि के पक्ष में, देते वही दलील।।७५।।

बदल गए इस देश की, राजनीति के सीन।
अब सलाम भी हो गया, भारत में रंगीन।।७६।।

नहीं देश के दर्द से, इनकों है कुछ काम।
वियेतनाम तक भेजते, वे ही लाल सलाम।।७७।।

टूट जिन्दगी का गया, हर चेतनमय छन्द।
नहीं विचरते अब कहीं, बाल्मीकि स्वच्छंद।।७८।।

कौन क्रौंच-पीड़ा लिखे, कौन लिखे युग-धर्म।
बुद्धिजीवियों का हुआ, जब मोटा तन-चर्म।।७९।।

गिरगिट दल ने मान ली, नेताओं से हार।
वह बदले दोबार रंग, ये प्रतिपल सौ बार।।८०।।

गयाराम हैं रात में, दिन में आयाराम।
रामो-वामो से हुआ, जीना आज हराम।।८१।।

पग-पग महँगाई खड़ी, सुरसा सा मुँह खोल।
पवन पुत्र लाचार है निकल न पाते बोल।।८२।।

भाँति-भाँति के गुरु यहाँ, उड़ा रहे हैं माल।
सच्चा गुरु कोई नहीं, सब हैं गुरुघण्टाल।।८३।।

याज्ञवल्क्य अब मौन हैं, पाखण्डी वाचाल।
किए मुष्ठिगत देश यह, कोटि युगीन सवाल।।८४।।

स्वार्थ-पाश में बँध गए, तथाकथित कुछ बुद्ध।
श्वान-धर्म अपना रहे, तिकड़मबाज प्रबुद्ध।।८५।।

एक बटाऊ की तरह, त्यागा तुमने राज।
पर कुर्सी हित मर रहे, ये पद लोलुप आज।।८६।।

हर अधर्म युग-धर्म है, कहते खल दो टूक।
व्याख्याकार समाज के बनते आज उलूक।।८७।।

आज जलद भी देश के, भूले अपनी रीति।
जनता-चातक को नहीं, इन पर रही प्रतीति।।८८।।

भुला दिया है भरत का, पातकियों ने त्याग।
आज चतुर्दिक उड़ रहे, गिद्ध चील बक काग।।८९।।

आज गगन से बरसते, गोली गन पिस्तौल।
कोइ रहनुमा भेद यह, नहीं रहा है खोल।।९०।।

रामेश्वरम् उदास है, अकथ बनी है पीर।
गंगोत्री का अब नहीं, चढ़ता पावन नीर।।९१।।

याद करो अपने वचन, वारक विश्वाधार।
जब-जब होता धर्म-क्षय, लेते तुम अवतार।।९२।।

क्या इससे भी विषमतर, होगा कुछ प्रतिकूल।
हे जनरंजन क्या गए, अपना ही प्रण भूल।।९३।।

या कि परीक्षा ले रहे, तुम भारत की आज।
खरदूषण, नाविक बने, खेते देश-जहाज।।९४।।

क्या अब भी कुछ शेष है, पूछ रहा युग प्रश्न।
गोरी बाबर आज भी, मना रहे हैं जश्न।।९५।।

किन्तु रावरी शक्ति पर, है पूरा विश्वास।
रचने को हैं व्यग्र बहु, हनुमत नव इतिहास।।९६।।

सरयू-तट पर देश की, श्रद्धा रही पुकार।
अंशों सँग फिर लीजिए, पुरुषोत्तम अवतार।।९७।।

तुम्हीं भक्ति हो शक्ति हो, भारत के आदर्श।
यति, गति, मति, रति, सुरति तुम जीवन के उत्कर्ष।।९८।।

निज क्षमता का हमें भी, होगा तब आभास।
कोई युग कवि आएगा, जब बन तुलसीदास।।९९।।

यह नवयुग दोहावली, लेती यहीं विराम।
कुशल क्षेम जीवन-मरण, हाथ तुम्हारे राम।।१००।। ●

एक शतक श्याम के नाम

कामना

चक्र सुदर्शन कर लिए, उर बैजन्ती माल।
मेरे मन-मंदिर रमो, सदा देवकी लाल।।

चिदानन्द आनंदघन, जगत नियंत्रक ईश।
मन-वाणी से परे हो, दामोदर योगीश।।१।।

अज अद्वैत अनाम तुम, गुणातीत भगवंत।
नेति-नेति कहते सदा, वेद यती, मुनि संत।।२।।

नित्य निरंजन निरतिशय, निर्गुण नित्यानन्द।
निखिल नियन्ता नाथ तुम, निरानन्द स्वच्छंद।।३।।

विगत मोह मद नाथ तुम, माया गुण गोतीत।
मेरे मन-मंदिर बसो, लिए हाथ नवनीत।।४।।

सकल सृष्टि तुममें रमी, सर्व व्याप्त सर्वज्ञ।
तुम्हीं अग्नि, होता तुम्हीं, तुम स्वाहा तुम यज्ञ।।५।।

पलक निमीलन दिवस निशि, सकल दिशाएँ कान।
सर्व चराचर ईश तुम, विश्वरूप भगवान।।६।।

कंज बिलोचन, कंज मुख, कंज सदृश अभिराम।
कंज चरण, कर कंज शुभ, नीलोत्पल तन श्याम।।७।।

माधव मदन मुरारि जय, मोहन माखन चोर।
मुख-शशि-शोभा हित बनें, मेरे नयन चकोर।।८।।

जयति रास-लीला निपुण, वंशीधर छविधाम।
कुँअर कन्हैयानन्द के, मीरा के घनश्याम।।९।।

सूरदास के प्रिय सखा, लास्य भक्ति-उत्कर्ष।
जयति गीत जयदेव के, नन्ददास के हर्ष।।१०।।

जयति बल्लभाचार्य के, कलित कल्पनाकाश।
अष्ट छाप के प्राण-धन, बिट्ठल के उच्छ्वास।।११।।

तुमने व्याख्यायित किया, कर्म-योग निष्काम।
इसीलिए युग वंद्य है, कृष्ण तुम्हारा नाम।।१२।।

तुमसे ही व्यंजित हुआ, नाथ विरोधाभास।
योगिराज रसराज तुम, कुब्जा के विश्वास।।१३।।

एक हाथ में बांसुरी, एक हाथ नवनीत।
कृष्ण तुम्हारा रूप यह, सदा वर्णनातीत।।१४।।

गोपी बल्लभ चक्रधर, पद्मनाभ भगवंत।
जयति रुक्मिणी-रमण जय, रूप प्रभाव अनंत।।१५।।

विदुरानी के प्रिय अतिथि, राधा के गलहार।
षोडष कलावतार तुम, शुद्ध ब्रह्म श्रुति-सार।।१६।।

तड़ित विनिन्दित पीट-पट, शोभित यों अभिराम।
ज्यों विद्युत भुज-पाश में, बद्ध पयोधर श्याम।।१७।।

निरुपमेय तुम कृष्ण हो, सब विधि अपरम्पार।
कौन हुआ तुमसे अधिक, आकर्षक अवतार।।१८।।

माखन चोरी में कभी, रहते तुम तल्लीन।
चीर-हरण में भी रहे, नटवर सदा प्रवीण।।१९।।

ब्रज-वनिताओं को कभी, दिया प्रेम संदेश।
कभी दिया संसार हित, गीता का उपेदश।।२०।।

तुम्हीं हास-उल्लास हो, तुम संस्कृति उत्कर्ष।
सच्चे अर्थों में मदन, तुम हो भारतवर्ष।।२१।।

तुम्हीं प्रेय हो श्रेय हो, तुम्ही ध्येय परमार्थ।
तुम्हीं आत्म-रति आत्म-सुख, तुम हो परम यथार्थ।।२२।।

जड़-चेतन में व्याप्त तुम, जगत पूज्य सुपुनीत।
चरण-कमल-रति माँगता, होकर परम विनीत।।२३।।

निर्विकार अप्रमेय तुम, परम धीर रण-रंग।
मेरे हृदयासन बसो, बल दाऊ के संग।।२४।।

हे नटवर नवनीत प्रिय, गोकुल चन्द्र ललाम।
यमुना अब भी जप रही, श्याम-श्याम घनश्याम।।२५।।

सिन्धु-तीर पर द्वारका, देख रही है राह।
तुम्हें देखने को बसी, एक निरंतर चाह।।२६।।

नाथ तुम्हारी नीतियाँ, कभी रही थीं साध्य।
किन्तु आत्म-वध हेतु वे, आज हो रहीं बाध्य।।२७।।

क्योंकि तुम्हारी गोटियाँ, आज खा रहीं मात।
धृतराष्ट्रों की कृपा से, दिन भी लगता रात।।२८।।

दिल्ली कालियदह बनी, अनगिन कालिय नाग।
प्रजातंत्र की लाश पर, खेल रहे वे फाग।।२९।।

बढ़ा बेहया सा यहाँ, कालयवन का वंश।
झूम रहे मद सुरा पी, संसद तक में कंस।।३०।।

गोपालों को छल रहे, कुछ नकली गोपाल।
बन कर वंशज रावरे, बजा रहे हैं गाल।।३१।।

जरासंध हर मोड़ पर, ठोक रहे हैं ताल।
बन बैठे दिग्पाल अब, कलियुग के शिशुपाल।।३२।।

अब घर-घर में पूतना, मायाविनी कराल।
गली-गली में बिछा है, कूटनियों का जाल।।३३।।

उपेक्षिता सी राधिका, बैठी आज उदास।
टूटी डोर सनेह की, गिरवी है विश्वास।।३४।।

ऊधव हैं अब डाकिया, लाते बैरँग पत्र।
बस फिल्मी अंदाज में, आते खत सर्वत्र।।३५।।

लुप्त रास-लीला हुई, अब हैं डिस्को डान्स।
जो जितना फूहड़ वही उतना है एडवांस।।३६।।

प्रेम कभी पावन रहा, अब संक्रामक रोग।
अब तो योगा हो गया, यह पातंजलि योग।।३७।।

एकलव्य सा था कभी सच्चा शिष्य महान।
गुरुवर द्रोणाचार्य को, दिया अंगूठा दान।।३८।।

अब तो चेले द्रोण की, खड़ी कर रहे खाट।
अंगूठा क्या शीश भी, लेते गुरु का काट।।३९।।

अब गुरु संदीपन नहीं, सब हैं गुरुघण्टाल।
विद्या-मंदिर क्लब बने, हाल हुए बेहाल।।४०।।

अब तुमसे ये रहनुमा, नाथ ले रहे होड़।
किन्तु होड़ में कर रहे, थोड़ी तोड़-मरोड़।।४१।।

रहे चराते धेनु तुम, ये चरते हैं देश।
चरा रहे हम सभी को, नेता आज ब्रजेश।।४२।।

अब नेता को चाहिए माइक माला मंच।
माल मिले यदि संग में, तो नेता पी टंच।।४३।।

छली प्रपंची तिकड़मी भ्रष्ट और मक्कार।
राजनीति की नाव की, थामे हैं पतवार।।४४।।

जनता को चिन्ता हुई, कहाँ हुई है भूल।
आम समझ सींचा जिसे, वह हो गया बबूल।।४५।।

विकृत हुआ भूगोल सँग, भारत का इतिहास।
जम्बुकधर्मी कर रहे, सिंहों का उपहास।।४६।।

आज अजामिल बन गए पूज्य और श्रीमान्।
असली नकली की यहाँ खत्म हुई पहचान।।४४।।

माखन खाते तुम रहे, द्वापर में ब्रजराज।
अब माखन खाते नहीं, किन्तु लगाते आज।।४८।।

द्वापर में थी पूतना, कालगर्ल हैं आज।
जिसे देखिए उसी के, हैं फिल्मी अंदाज।।४९।।

नाग नाथ कर किया था, तुमने उसे अधीन।
किन्तु बजाते आज हम, समझौते की बीन।।५०।।

हुआ आज कश्मीर में, नाथ राष्ट्र-हित गौण।
कितने केसी कर रहे, आज वहाँ घुड़दौड़।।५१।।

केसी-वध होता नहीं, होता है सम्मान।
यह गर्हित तुष्टीकरण, कुशल करें भगवान।।५२।।

देश-द्रोहियों के गले, डाल प्रेम से बाँह।
बेशर्मी दिखला रहे, भारत के नरनाह।।५३।।

जिनको गोली चाहिए, उनको हलुआ खीर।
यह मर्मान्तक पीर अब, भोग रहा कश्मीर।।५४।।

नहीं समझ में आ रहा, क्या है इसका राज़।
अपने ही घर में बने, हम शरणार्थी आज।।५५।।

महिमा-मण्डित हो रहे, नापाकी गद्दार।
सुविधा का पय-पान कर, छोड़ रहे फुंकार।।५६।।

कभी तुम्हारी बांसुरी, पर था मुग्ध समाज।
नीरो वंशी चैन की, बजा रहे हैं आज।।५७।।

तुमको कवि कहते रहे, सदा त्रिभंगी लाल।
आज छत्रभंगी सभी, सत्ताखोर दलाल।।५८।।

पहले तुम संधानते, थे दुष्टों पर चक्र।
आज देश में चल रहा, षडयंत्रों का चक्र।।५९।।

जो समाज में शीर्ष थे, बने सुदामा आज।
ऊधव की भी दब गई, कलियुग में आवाज।।६०।।

एक महाभारत हुआ, था द्वापर में घोर।
अब घर-घर कुरुक्षेत्र है, मिलता ओर न छोर।।६१।।

कुरुक्षेत्र में चले थे, दिव्य वाण ब्रह्मास्त्र।
अब संसद से सड़क तक, चलते हैं जूतास्त्र।।६२।।

सभी जयद्रथ बन गए, आज माफिया डान।
चक्र-ब्यूह में फँस गया, पूरा हिन्दुस्थान।।६३।।

जरासंध जरखोर बन, रहे आज ललकार।
शिखण्डियों का हो गया, सत्ता पर अधिकार।।६४।।

तुमने गीता मिस रचा, कालजयी आयाम।
अब तिकड़म की बांचते, गीता नमकहराम।।६५।।

पहले शकुनी एक था, जुआबाज सरताज।
पर मामा अब हर गली, हुए लाटरीबाज।।६६।।

मामाओं ने दी बिछा, ऐसी यहाँ बिसात।
प्यादों से ही हो रहे, शह सवार अब मात।।६७।।

द्वापर में तो एक था, दम्भी पौंड्रक एक।
अब पग-पग पर हैं जमें, पौंड्रक यहाँ अनेक।।६८।।

एक द्रौपदी थी कभी, अब हैं यहाँ हजार।
मातृ अस्मिता को रहा, कौरव दल ललकार।।६९।।

पार्थ, कर्ण, गुरु द्रोण से, अब न अतिरथी धीर।
महारथी अब बन गए, नाथ चुनावी वीर।।७०।।

चोर लुटेरे कर रहे, आज चुनावी युद्ध।
उग्रसेन कैसे लड़े, इनके आज विरुद्ध।।७१।।

हे मुरारि जब से हुआ, अपना देश स्वतंत्र।
प्रबल तभी से हो गया, लूट-पाट का तंत्र।।७२।।

राष्ट्र-धर्म की जगह अब, है घोटाला धर्म।
हर चोरी का रह गया, अन उद्घाटित मर्म।।७३।।

इक से बढ़ कर एक हैं, नेता तीरंदाज।
गिरहकटी में सभी के, हैं मौलिक अंदाज।।७४।।

पशु-चारा में कर रहे, गोलमाल गोपाल।
लल्लू-पंजू तक यहाँ, करते खूब कमाल।।७५।।

कोटि धेनुकासुर यहाँ, गो-वध में तल्लीन।
हड़प बकासुर रहे हैं, सुविधाओं के मीन।।७६।।

अब के संदीपन बने, पूरे ट्यूशन खोर।
गुरुदेवों की कृपा से, हुआ नकल का जोर।।७७।।

तब अर्जुन करते रहे, लक्ष्य-वेध संधान।
अब घोटाला काण्ड में, अर्जुन निपुण महान।।७८।।

दुःशासन ने कर दिया, पूरा सत्यानाश।
स्वीस बैंक में राष्ट्र का, कैद विभव उल्लास।।७९।।

लोक-चेतना हित न अब, कलम उठाते व्यास।
करते काफी हाउस में, केवल वाग्विलास।।८०।।

बदल गए कलिकाल में, इन व्यासों के कर्म।
पूँछ हिलाना रह गया, एकमात्र ही धर्म।।८१।।

अन्दर से कुछ और हैं, बाहर से कुछ और।
बगुलापंथी बन गए, पूज्य सभा-सिरमौर।।८२।।

आरक्षी दल संगठित, पंजीकृत बटमार।
कोतवाल जी के हुए, चोर उचक्के यार।।८३।।

क्या बोलें किस दौर से, गुज़र रहा है मुल्क।
नाम घूस का प्रेम से, अब है सुविधाशुल्क।।८४।।

होता था पहले कभी, यहाँ यज्ञ नर-मेध।
किन्तु आज खुल कर यहाँ, होता नारी मेध।।८५।।

ललनाओं को कर रहा, स्वाहा आज दहेज।
नव वधुओं के लिए है, अब तन्दूरी सेज।।८६।।

अब न लजाता है यहाँ, कोई मां का दूध।
क्योंकि पी रहे आज सब, बोतल-दूध सपूत।।८७।।

जन्म-भूमि बेहाल है, नाथ तुम्हारी आज।
देखो तुष्टीकरण के, नए-नए अंदाज।।८८।।

गोवर्द्धन भी आज है, पर न पूर्व उल्लास।
कीर्ति तुम्हारी याद कर, है खामोश उदास।।८९।।

यमुना के तट मलिन हैं, अब न बोलते कीर।
पूर्ण प्रदूषित हो गया, रवि-तनया का नीर।।९०।।

भारतवासी नाम को, मिलता यहाँ न एक।
जाति-धर्म के हो गए, तंग दयार अनेक।।९१।।

अब भारत में आ गया, यह कैसा दुर्योग।
सिर धुन-धुन कर सोचते, कहाँ गए वे लोग।।९२।।

कृष्ण तुम्हारे देश में, उल्टे सारे ढंग।
हर सरकारी आदमी, है बदज़ात तुरंग।।९३।।

आह-पीर अब धरा की, सुनना हुआ हराम।
नेताओं का हो गया, गज-गैंडा सा चाम।।९४।।

इस हतभागे देश की, रूठ गई तकदीर।
जनता केवल पी रही, आश्वासन का नीर।।९५।।

कत्लगाह सा लग रहा, पूरा हिन्दुस्थान।
धीरे-धीरे खो रहा, अपनी हर पहचान।।९६।।

इतने पर भी कह रहे, मेरा देश महान।
क्यों अब तक डूबा नहीं, नाथ राष्ट्र जलयान।।९७।।

नाथ तुम्हीं से प्रार्थना, करता आज सखेद।
रचो यज्ञ ऐसा नया, भस्म सभी हों भेद।।९८।।

किये तुम्हारे सामने, प्रस्तुत ये कुछ चित्र।
किन्तु दशा इस देश की, इससे अधिक विचित्र।।९९।।

है यथार्थ की झलक यह, यद्यपि शब्द भदेस।
नटवरलालों का तुम्हें, अर्पित शतक व्रजेश।।१००।। ●

कतिपय अन्य कविताएँ

सरस्वती-वंदना

जिसकी कीर्ति-चन्द्रिका में
यह विश्व नहाया करता।
जिसका वाहन मोती चुगता,
ज्ञान लुटाया करता।।

अनायास जो बैठ हृदय में,
भाव-सुधा भर जाती।
जिसकी पावन स्मृति से ही,
आधि-व्याधि हर जाती।।

कवि के उर उदात्त भावों की
जो अजस्र-निर्झरिणी।
उद्‌गम, आलंबन, प्रेरक,
जो कलित काव्य की जननी।।

वही भारती कंज-करों की
सर पर छाया कर दे।
मेरे सूने हृदय-कोष में,
भाव अलौकिक भर दे।। ●

वही हमारा देश

जहाँ कल्पना धारण करती हो नित नव परिवेश।
वही हमारी जन्मभूमि है वही हमारा देश।।

हरी दूब पर जहाँ सजा हो शबनम का श्रृंगार,
नदियाँ इठलाती बहती हों ज्यों चांदी की धार।
हर पावस में मोती-कण बन झरती मेघ फुहार,
जहाँ सुवासित मंद-गंध बिखराती मलय बयार।
भूतल का उद्यान जहाँ पर है कश्मीर प्रदेश,
वही हमारी जन्म-भूमि है वही हमारा देश।।१।।

शुक-सारिका राम-यश गाते श्रद्धा के अवतंस,
श्यामा मंजरियों पर नाचे लहरों पर कलहंस।
मेघ-बिजलियों के नर्तन से होड़ ले रहे मोर,
जहाँ चांदनी में चिंगारी चुगते चतुर चकोर।
जिसकी सुषमा पर सम्मोहित होता स्वयं सुरेश।
वही हमारी जन्म-भूमि है वही हमारा देश।।२।।

हर फागुन में रास रचाते अब भी माखन चोर,
राधा को गुलाल से रँगते अब भी हैं बरजोर।
मन भावन सावन भरता जीवन में सदा हिलोर,
जहाँ गुलाबी सन्ध्या आती सोने का नित भोर।
जिसकी नित्य आरती करते चन्दा और दिनेश,
वही हमारी जन्म-भूमि है वही हमारा देश।।३।।

जहाँ अयोध्या, मथुरा, काशी, तीरथराज प्रयाग,
जहाँ लोक का कलुष धो रही गंगा भर अनुराग।
वृन्दावन में धेनु चराता गीता का भगवान,
और अस्मिता का रचते हैं राम जहाँ हिमवान।

अब भी गूँज रहा कण-कण में वेदों का संदेश,
वही हमारी जन्म-भूमि है वही हमारा देश।।४।।

जहाँ सिंह के दाँत, खोल मुँह, गिनते शिशु बरियार,
रगड़ कंठ से जहाँ देखते वीर खड्ग की धार।
जहाँ लोकहित अस्थिदान का सजता है त्यौहार,
और सती के सत के आगे होता यम लाचार।
जहाँ दिया था उपनिषदों का ऋषियों ने उपदेश,
वही हमारी जन्मभूमि है वही हमारा देश।।५।।

जहाँ सिंधु पर सेतु बाँधते निर्वासित बलवान,
जहाँ हुए हैं वीर धनुर्धर पार्थ, भीष्म, चौहान।
जौहर की ज्वालाएँ धधकी मुण्ड-माल का दान,
हल्दीघाटी अभी कह रही चेतक का अभियान।
जहाँ शिवा-राणा का अब भी दिखता रण-आवेश,
वही हमारी जन्मभूमि है वही हमारा देश।।६।।

जहाँ क्रांति का बिगुल बजाते भगतसिंह आजाद,
जलियांवाला बाग दिलाता बलिदानों की याद।
जहाँ स्वयं आकाश कर रहा अर्पित इन्हें प्रणाम,
अपनी आग दीप्त हम करते लेकर इनका नाम।
जहाँ स्वप्न में भी कायरता करती नहीं प्रवेश।
वही हमारी जन्मभूमि है वही हमारा देश।।७।।

रामायण गीता से पुलकित जिसके पावन ग्राम,
जिसका बच्चा-बच्चा भाषित होता ज्यों घनश्याम।
जहाँ सूर तुलसी मीरा सँग कबिरा गाते गीत,
अभी गूँजता है कानों में जहाँ साम संगीत।
जिसको रचकर धन्य हो गया कलाकार सर्वेश,
वही हमारी जन्म-भूमि है वही हमारा देश।।८।। ●

कविता कहाँ रहती है?

तुम पूछते हो— कविता कहाँ रहती है?
इसके पूर्व मैं उत्तर दूँ
बीच में ही कुछ भग्न पाषाण खंड बोल पड़ते हैं—
कविता तो कब की मर चुकी है।

तभी मेरी संवेदना मुस्करा कर कहती है—
कविता कभी नहीं मरती है।
हाँ! ऐसा कहनेवाले अवश्य मर चुके हैं।
कविता और जीवन परस्पर पर्यायवाची हैं
दोनों ही सव्यसाची हैं।

कविता बसती है—
अन्तर के हर उच्छ्वास में
जिन्दा रहने के अहसास में।

कविता बसती है—
अबोध शिशु की निस्पृह मुस्कान में
पक्षी की पांख और करुणाभरी आंख में।

कविता बसती है—
सर्वहारा के अधिकार बोध में
जेठ की भरी दोपहरी में
जलते-खौलते मेहनतकश के पसीने में
और सीमा पर मर कर भी जीने में।

कविता बसती है—
हिमशिखरों के अवाक् शुभ्र सौंदर्य में
अन्नपूर्णा धरती की ममतामयी गोद में
आम्र मंजरियों एवं मादक महुए के फूल में
पवित्र तुलसी के वैष्णवी दुकूल में।
बादलों के भैरव गर्जन
प्रेयसी के 'खंजन मंजु तिरीछे नैननि' के सैन में
गायक की वीणा एवं पीड़ा भरे बैन में।

कविता जीवन का छंद है
आदमी के प्रति एक पावन अनुबंध है—
माटी की सोंधी गंध है।

कविता,
हर उषा के साथ नित नए रूप में सँवरती है
कविता कभी नहीं मरती है। ●

दो मुक्तक

हमीं वृन्दा-विपिन में श्याम बन मुरली बजाते हैं,
हमीं वृज-गोपियों में रास की लीला रचाते हैं।
मगर जब राष्ट्र के सम्मान पर आघात होता है,
हमीं गीता सुनाकर के सुदर्शन भी उठाते हैं।

• •

चाह बुद्ध की नहीं प्रबुद्ध जोश चाहिए,
याचना के शब्द छोड़ सिंह-घोष चाहिए।
उच्च शैल श्रृंग से पुकारती है भारती,
आज देश को महज सुभाष बोस चाहिए। ●

सिंह अहिंसाव्रती यहाँ रह सकता है जीवनभर

एक हाथ में विश्व-प्रेम का
खिलता हुआ कमल हो।
और दूसरे में पौरुष का,
आयुध का संबल हो।।

तभी राष्ट्र की चल सकती है
पावन नीति अहिंसा।
ग्रस लेगी, अन्यथा तुम्हें
जग की निर्मम प्रतिहिंसा।।

सिंह अहिंसाव्रती यहाँ
रह सकता है जीवन भर।
किन्तु, अहिंसक शशकों का,
जीवित रहना है दूभर।।

यह वह देश जहाँ तन-धारी,
हैं विदेह कहलाते।
भोगी रहकर भी योगी की,
दिव्य शक्तियाँ पाते।।

तो फिर लेकर अस्त्र,
अहिंसक तुम भी बन सकते हो।
अपनी रक्षा कर सकते हो,
शान्ति बचा सकते हो।।

हिंसा और द्वेष का तुमको,
गरल सदा पीना है।
मानव को जीवित रखने के–
लिए, तुम्हें जीना है।। ●

वसुधा के भोगने का उसे ही अधिकार है

छोड़ दिया जिसने भी शक्ति की उपासना को,
बहती नहीं शूरता की अंतर में धार है।
रूठ जातीं उससे सु-सिद्धियाँ धरातल की,
नियति भी करती सदा उस पै प्रहार है।
लोटती विजय-श्री उसी के चरणों में सदा,
जिसके करों में तनी रहती तलवार है।
जलती अदम्य-आग पौरुष की जिसमें भी,
वसुधा के भोगने का उसे ही अधिकार है।।

• •

शक्तिमय नरता का, साहस का, पौरुष का,
जिसकी भुजाओं में उमड़ता सदा ज्वार है।
माप लेता कौतुक में उन्नत नगेश श्रृंग,
मानी महासागर तक मान जाता हार है।
काँपती दिशाएँ, वायु-मंडल दहल जाता,
कोई नरसिंह जब करता ललकार है।
गिनता है दाँत जो मृगेन्द्र के भी खोल मुँह
वसुधा के भोगने का उसे ही अधिकार है।।

• •

देखता है काल को भी सदा ही भृकुटि बंक,
करते उसका ही सभी साका अंगीकार है
निज आत्मबल से ही प्राप्त करता है सिद्धि
लेता विधि से न कभी जूठे उपहार है।
उससे ही नित्य राष्ट्र होता है प्रदीप्तमान
नर की आत्म-शक्तियाँ भी करती सिंगार है।
कंठ से रगड़ धार असि की देखता है जो,
वसुधा के भोगने का उसे ही अधिकार है।। ●

तभी सच्ची दिवाली है.....

दिया माटी का है लेकिन निरंतर प्राण ज्योतिर्मय,
अचिर पर चिर लिखा करता विभा का गीत निःसंशय।
चिरन्तनता न पाता है कभी दनुजत्व धरती पर,
अमर, अक्षुण्ण, अव्यय है मनुजता की यहाँ पर लय।।

जिन्होंने आजतक केवल मनुज के गीत गाए हैं,
जिन्होंने आजतक निज प्राण माटी हित लुटाए हैं।
जिन्होंने आजतक पक्की चुनौती दी अँधेरों को
जिन्होंने आजतक विश्वास के दीपक जलाए हैं।।

जिन्होंने रँग बसन्ती से रँगे अपने सदा चोले,
जिन्होंने मंत्र वन्देमातरम् के मृत्यु तक बोले।
जिन्होंने मृत्यु में आदर्श जीने के सदा खोजे,
लगे आघात अस्सी, पर नहीं रण-भूमि से डोले।।

जिन्होंने स्नेह शोणित से अँधेरे को मिटाया है,
जलाकर प्राण की बाती जहाँ को पथ दिखाया है।
कहीं कोई गली, घाटी न पगडण्डी अँधेरी हो
सभी को ज्योति देने हित स्वयं का घर जलाया है।।

उन्हीं के नाम पर यदि एक भी दीपक जलाते हैं,
उन्हीं का नाम लेकर हम स्वयं बन दीप जाते हैं।
तभी सच्ची दिवाली है, यही सच्ची दिवाली है
नहीं तो मात्र परिपाटी, दिवाली की निभाते हैं।। ●

उन्हीं वीरवर युग-पुरुषों को प्रथम नमन है

युद्ध-गरल जो शिव सा करते सदा शमन हैं,
जो स्वराष्ट्र का सदा उठाते गोवर्द्धन हैं।
जिनकी भृकुटि बंक से रुकता काल-पवन है,
उन्हीं वीरवर युग-पुरुषों को प्रथम नमन है।।

जिनके भुजदण्डों में पौरुष मचला करता
क्षण-क्षण में इतिहास देश का बदला करता।
स्वर्ग-लोक से मातृभूमि जिनकी पावन है,
उन्हीं वीरवर युग-पुरुषों को प्रथम नमन है।।

जिनके तप्त-लहू से सिंचित सीमाएँ हैं,
काल-वक्ष पर अंकित जिनकी गाथाएँ हैं।
जिनके जयी पगों पर झुकता निखिल-भुवन है,
उन्हीं वीरवर युग-पुरुषों को प्रथम नमन है।।

लौह भट्ठियों में जिनका शोणित जलता है
जिनके पौरुष से युग का स्वरूप ढलता है।
जिनके श्रम से राष्ट्र नया पाता जीवन है,
उन्हीं वीरवर युग-पुरुषों को प्रथम नमन है।।

जिनके श्रम से भूमि उगलती रहती कंचन,
हल, खेती जिनका सिंगार फसलें हैं यौवन।
खलिहानों में जिनके पावन बसे सपन हैं,
उन्हीं वीरवर युग-पुरुषों को प्रथम नमन है।। ●

कोई क्या करे?

काग चलते हंस की अब चाल कोई क्या करे।
स्वस्तिवाचन कर रहे बैताल कोई क्या करे।।

अब ज़माने का चलन ऐसा हुआ है क्या कहें
नम किए बैठे नयन घड़ियाल, कोई क्या करे।।

देश सारा आज क्रीड़ा क्षेत्र, नेता खेलते,
और जनता बन गई फुटबाल, कोई क्या करे।।

चोर को अब चोर कहना, भूल है अपराध है,
चोर सारे बन गए कोतवाल कोई क्या करे।।

मान मिलता अब न 'राणा' या 'शिवा' को आजकल
मीरजाफ़र के गले जयमाल कोई क्या करे।।

बेशरम बनकर विधा मैंने बदल दी दोस्तो,
क्योंकि अब तो कवि हुए कव्वाल, कोई क्या करे।। ●

आभार लेकर क्या करूँ मैं

दे न पाया विश्व को यदि एक भी आलोक का क्षण,
व्यर्थ में संसार का आभार लेकर क्या करूँ मैं।।

आदि पीड़ा की जलन ले आजतक चलता रहा हूँ,
रोशनी के ही लिए मैं तिमिर में जलता रहा हूँ।
एक तिनके के लिए भी उम्र भर गलता रहा हूँ,
पर लगा जैसे जगत को आजतक छलता रहा हूँ।
एक हाहाकार माटी का बसा है जन्म से ही,
सिन्धु का अब और हाहाकार लेकर क्या करूँ मैं।।

जल रहा हूँ क्योंकि जलना आदमी का धर्म ही है,
चल रहा हूँ क्योंकि चलना आदमी का कर्म ही है।
पी रहा हूँ गरल तो कोई नहीं अहसान करता,
क्योंकि विष का पान करना आदमी का मर्म ही है।।
है अधूरा व्रत, न पूरा कर सका हूँ प्रण अभी, तो–
धन्यवादों का वृथा गुरुभार लेकर क्या करूँ मैं।।

आदमी हूँ आदमी से प्यार करना चाहता हूँ,
आदमी का गीत से श्रृंगार करना चाहता हूँ।
सामने हहरा रहा जो कालिमा का सिंधु गहरा,
आदमी के ही लिये अब पार करना चाहता हूँ।
शूल दामन में लपेटे आदमी की राह के, तो–
फिर किसी के फूल का उपहार लेकर क्या करूँ मैं।।

हीन हो सकते यहाँ मधुमास के उपहार सारे,
हीन हो सकते कुबेरों के विभव भण्डार सारे।
पर तुम्हारा आदमी छोटा न हो सकता कभी भी,
हो भले कोई बड़ा कवि विश्व में कवि से तुम्हारे।
इसलिये मैं आदमी का आदमीपन माँगता हूँ,
व्यर्थ आडम्बरों का अंबार लेकर क्या करूँ मैं।। ●

कवि का सौदा

अपनी आँसू की धार मुझे दे जाओ
मैं उसे बना मुस्कान तुम्हें दे दूँगा।

मैं प्रलयंकर विषपायी का अवतारी
युग-युग से मेरे अधर गरल के प्यासे
प्रतिवर्ण ज्योति से सिक्त सुधा की धारा
प्रतिवर्ण निरंतर ज्योतित आत्म-विभा से
इसलिए मुझे जीवन का विष दे जाओ,
मैं बना सुधा वरदान तुम्हें दे दूँगा।।

वैभव के ऊँचे राजमहल ले जाओ
मुझको कुटिया से प्यार बहुत है साथी
मैंने पलकों से जग का पंथ बुहारा
हर शूल फूल से कोमल मुझको साथी
इसलिए शूल मुझको अपने दे जाओ
मैं बना सुमन-मुस्कान तुम्हें दे दूँगा।।

तुम ले लो पूनम मुझे अमा दे जाओ
हर दम पर मुझको दीप जलाना आता।
जिस ओर देखता दृष्टि उठाकर यों ही
सूखे जीवन का हरसिंगार खिल जाता
इसलिए मुझे अपने पतझड़ दे जाओ
मैं उसे बना मधुगान तुम्हें दे दूँगा।।

इस धरती के नैराश्य और क्रंदन को
अपने आंगन में नित्य बुलाया करता
बदले में जग के सूखे से आँगन में
आनंद और आशा बरसाया करता

इसलिए विश्व का हाहाकार मुझे दो
मैं उसे बना जय गान तुम्हें दे दूँगा।।

जीवन में मैंने हार नहीं मानी है
हर पग पर विजय चढ़ाती है जयमाला
केवल मेरे संस्पर्श मात्र से साथी
शीतल हिम सी बन जाती है हर ज्वाला
इसलिए मुझे अपनी ज्वाला दे जाओ
मैं उसे बना हिमवान तुम्हें दे दूँगा।।

अपनी आँसू की धार मुझे दे जाओ
मैं उसे मुस्कान तुम्हें दे दूँगा।। ●

विपिन बंधुओं अभिनंदन !

जिस परंब्रह्म को नेति-नेति कह वेद पुकारा करते हैं,
जो मात्र कल्पना से सारा ब्रह्माण्ड सँवारा करते हैं।
जिनका ले पावन नाम लोग भवसिन्धु पार हो जाते हैं,
उनको निषाद वन-बंधु गंग के पार उतारा करते हैं।।

अपने इन विपिन बंधुओं का आओ हम सब सम्मान करें,
आओ इनके उत्कर्षों पर हम भारतीय अभिमान करें।
इनसे न कभी हम बिछुड़ेंगे, करनी है यही प्रतिज्ञा अब,
फिर से त्रेता उतार भू पर भू-माँ को हिन्दुस्तान करें।।

इनके अवदानों का वंदन, इनके अभियानों का वंदन,
इनके बलिदानों का वंदन, इनके यश गानों का वंदन।
अपने अतीत का करो ध्यान, जागो नवयुग के हनूमान,
ओ विपिन बंधुओं आर्य धरा कर रही तुम्हारा अभिनंदन।। ●

पावस-प्रसंग

पावस-वियोगी सब 'आउट ऑफ डेट' हुए,
ग्लीसरीन से ही अब उमड़ती अश्रुधार है।
घन तो खूब आते घनश्याम नहीं दिखते कहीं
दामिनी पर हुई लोडशेडिंग की मार है।।
कोयल की कूक भी न हूक उपजाती अब
झिल्लियों की सुनिए हर ओर झंकार है।
कैसी हुई दुर्गति अब प्रकृति-प्रिया की मित्र,
नूतन सदी की यही पावस बहार है।।

बिजली आश्वासन की करती चकाचौंध खूब,
मोर शोर करते रहे चातक छले गए।
पिउ-पिउ रटते रहे पपिहा कलापी किन्तु,
बुझी नहीं प्यास अरमान सब दले गए।
अंबर में उमड़े अनेक रंग वाले घन,
लगता है सभी के रंग-ढंग बदले गए।।
नेता के समान घन सावन के सारे हुए,
गरजे खूब किन्तु बिना बरसे चले गए।। ●

उन्हें प्रणाम आज है

जो देश के लिए जिए उन्हें प्रणाम आज है,
जो देश के लिए मरे उन्हें प्रणाम आज है।
जो देश राग गा रहे, जो प्रीति हैं जगा रहे,
जो शम्भु बन गरल पिएं उन्हें प्रणाम आज है।।

ये देश वह्नि-राग है इसे प्रणाम तुम करो,
ये विश्व का सुहाग है, इसे प्रणाम तुम करो।
यही है विश्व भारती ऋचा-ऋचा पुकारती,
यहीं-यहीं मनुष्यता स्वरूप है सँवारती।।

ये अर्चना की भूमि है ये वन्दना की भूमि है,
ये सर्जना की भूमि है ये कल्पना की भूमि है।
तुम इसे नमन करो, तुम इसे चमन करो,
राष्ट्र के तमिस्र का समग्र आचमन करो।।

जिन्हें भवेश से अधिक स्वदेश इष्ट है सदा,
जिन्हें परार्थ के लिए स्वक्लेश इष्ट है सदा।
जो भारती की आरती उतारते हैं सर्वदा,
उन्हें प्रणाम कर रही है गीतिका प्रियम्बदा।।

ये भूमि सिन्धु अम्बरा सुदेव निर्मितम् धरा,
यही है अन्नपूर्णा, यही-यही ऋतम्भरा।
यहीं प्रथम लिखी गई मनुष्य की किताब है,
महान भूमि का हिज़ाब आब बेहिसाब है।।

उन्हें प्रणाम तुम करो जो राष्ट्र को सँवारते,
उन्हें प्रणाम तुम करो सृजन को जो पुकारते।
उन्हें प्रणाम तुम करो जो सरहदों पे शान से,
हथेलियों पे झूम-झूम शीश हैं उछालते।।

जो भट्ठियों में तप रहे, जो राष्ट्रहित में खप रहे,
जो रात दिन स्वदेश का विकास मंत्र जप रहे।
मनुष्यता का जो अलख जगा रहे प्रणाम है,
फसल जो प्यार की यहाँ उगा रहे प्रणाम है।।

जो अंधकार में प्रकाश के प्रदीप धर रहे,
मनुष्य के लिए जो स्वस्ति-मंत्र-पाठ पढ़ रहे।
जिन्हें न मोह व्यष्टि से समष्टि इष्ट है सदा,
उन्हें प्रणाम है जो सर्व लोक-शोक हर रहे।।

ये देश ओंकार है, ये सृष्टि का सिंगार है,
यहाँ का एक-एक कण पवित्र बेशुमार है।
ये कर्म की युग-स्थली जुही की मंजुला कली,
विराट व्यालराट् की यही यही है अंजली।।

इसे प्रणाम तुम करो ये सृष्टि का विहान है,
न टूटती है जिसकी लय ये वह महान गान है।
इसी की शान पर मरो, इसी की बान पर मरो,
इसी की आन पर सपूत अस्थिदान तक करो।।

तुम इसे नमन करो, तुम इसे चमन करो,
राष्ट्र के तमिस्र का, समग्र आचमन करो।। ●

मैं कृत्रिम सम्बोधनों से ही पुकारा जा रहा हूँ

मैं नभस्वत उषा के नव क्षितिज का आरुण्य हूँ
गीत हूँ गन्तव्य हूँ गति और युग तारुण्य हूँ
संकीर्णताओं की परिधि से मित्र अनुशासित नहीं हूँ
मैं किसी वेदान्त से आद्यन्त परिभाषित नहीं हूँ
मैं कभी व्याही विभाओं से प्रकाशित भी नहीं हूँ
मैं किसी बूढ़ी ऋचा से रंच उद्भाषित नहीं हूँ
मैं स्वयं भव की विभा का एक वैभवपूर्ण निर्झर
किन्तु फिर भी वर्तिकाओं से सँवारा जा रहा हूँ
मैं कृत्रिम सम्बोधनों से ही पुकारा जा रहा हूँ।

ओ प्रभा के रुद्ध स्रोतो! फूट जाओ फूट जाओ
ओ तमस की कालिमाओ! छूट जाओ छूट जाओ
जागरण का गीत मैं हूँ सर्जनाओं को समर्पित
साधना-जीवन कला हित दिव्यताओं को विसर्जित
इन्द्रधनुषी लेखनी में जिन्दगी के रंग भर कर
कर रहा हूँ व्योम पट पर आदमी के चित्र चित्रित
पारम्परिक अनुगमन को मैं जोड़ता नूतन क्षितिज से
पर किसी अव्यक्त से मैं नित्य हारा जा रहा हूँ।।

गीत मेरा जागरण की डाल पर पलकें उठाए
चारु स्वर्णिम चंचु में रवि नव प्रभातों का दबाए
एक दाहक ज्वार सा युग कण्ठ मुखरित हो रहा है
बद्ध जीवन का मलय उन्मुक्त प्रसरित हो रहा है
मृत्यु की काली गुहाओं में सुधा मकरंद भरता
जड़ित जीवन का तमस भी दिग्प्रहसित हो रहा है
मैं नहीं अनुवाद केवल मूल का चिर अवतरण हूँ
इसलिए इस तिमिर सर में मैं उतारा जा रहा हूँ।
मैं कृत्रिम सम्बोधनों से ही पुकारा जा रहा हूँ।। ●

गायत्री महामंत्र : पद्यानुवाद

सर्वव्यापक ब्रह्म जो अद्वैत प्राण स्वरूप।
भीति-नाशक लोकत्रय-पति सकल सुख का रूप।

परम तेजस्वी प्रकाशक
श्रेष्ठ चिर वरणीय।
तम-अविद्या पाप-नाशक
पुण्यमय भजनीय।
करें धारण हम उसे, जो पूर्ण दिव्यालोक।
भरे सबकी चेतना में प्रेरणा-आलोक।

० ० ०

कौन है वह सर्वव्यापक श्रेष्ठ ज्योतिर्वान।
कौन तीनों लोक में भजनीय ऐश्वर्यवान।
कौन जिससे चेतना होती सतत गतिमान।
कौन भू-नभ-स्वर्ग में है व्याप्त ज्योति समान।

कौन है अद्वैत अव्यय
स्वयं का उपमान।
कौन देता मोक्ष चिर-
आनन्द का वरदान।
करें आओ हम उसी का मनन, चिंतन, ध्यान।
और उसकी अर्चना में करें अर्पित प्राण।

हम उसी की वंदना करें
हम उसी की अर्चना करें

हवि उसी को करें अर्पित, प्राण हो उसमें विसर्जित
बस वही है परम ज्योतिर्धाम।
उस प्रकाशक भुवन स्रष्टा को अशेष प्रणाम।। ●

नाम	:	डॉ० अरुणप्रकाश अवस्थी
जन्मस्थान	:	मौरावां, उन्नाव (उ० प्र०)
शिक्षा	:	एम. ए. (हिन्दी, अंग्रेजी, पत्रकारिता, भूगोल), पीएच. डी.
रचनाएं	:	रावीतट (खण्ड काव्य) धर्म और अनुभूति वंदनीया युगे-युगे यह देश नहीं देवालय है क्रांति का देवता (पुरस्कृत) (खण्ड काव्य) महाराणा का पत्र (पुरस्कृत) (खण्ड काव्य) अँसुवन जल सींचि-सींचि सिन्धु शार्दूल दाहिरसेन (उपन्यास) सबसे ऊपर कौन (उपन्यास) एक विन्दु जो सिन्धु बन गया राम चालीसा इसके अतिरिक्त ४ सम्पादित ग्रंथ; विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लगभग ४५०० गीत — ग़ज़लें व कविताएं; १५० निबन्ध तथा ४०० कहानियां प्रकाशित।
सम्पर्क सूत्र	:	सी-ए ५/१०, देशबन्धु नगर, बागुईहाटी कोलकाता-७०० ०५९, दूरभाष : ५७६ १५२२
स्थाई पता	:	इन्द्रप्रमा नगर, मौरावां, उन्नाव (उ० प्र०)
दूरभाष	:	(०५१४२) ७६०९१

श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय • कोलकाता